<HINDI LITERATURE><PLAYS><ARVIND BHATNAGGAR><LAKARHARA AUR VAN><1986><NCERT (KATHAPUTALI NATAK)><NEW DELHI><52-56><1474><BHATNAGAR, A-LAKARHARA AUR VAN -PL-O>

लकड़हारा घूमता घूमता मंच पर आता है। लकड़हारे के हाथ मेंकुल्हाडीं है। वह पेडं के पास जाकर थम जाता है।)लकड़हारा- (पेड़ को देखकर)हे भगवान, तेरी भी क्या माया कहीं पर धूप, कहीं पर छाया चलो, आज इसीपेड़ को क़ाटें। इससे आज की उदर पूर्ति हो जाएगी।(पेड़ को काटने के लिए कुल्हाड़ी चलाता है पर कुल्हाड़ी हाथ से छूटकरनदी में गिर जाती है।)लकड़हारा - है भगवान । ये क्या हुआ ।। मेरी कुल्हाड़ी.
गहरा पानी है, तैरना आता नहीं। क्या करूं, क्या नहीं अब क्या होगा, क्या काटूंगा, क्या बेचूंगा। आज बच्चे क्या खावेगें। (इस प्रकार चिंतित एवं दुखी होता है) (इसी बीच ईश्वर ग्रामीण का वेश धारण कर मंच पर प्रस्तुत होते हैं)ग्रामीण - क्यों बड़े दुखी लग रहे हो। क्या हुआ ?लकड़हारा - (दुःख भरे शब्दों में) क्या करूं भाई, मैं पेड़ पर लकड़ियांकाट रहा था। इसी बीच मेरी कुल्हाड़ी इस गहरे पानी में गिर पड़ी। मेरा तो सब कुछ चला गया। इसके बिना मेरे परिवार का क्या होगा।ग्रामीण - हां भाई, तुम्हारा कहना तो ठीक है।लकड़हारा - भाई, मैं बहुत गरीब हूं। यदि तुम मेरी मदद कर सको तो तुम्हारा बड़ा अहसान होगा।ग्रामीण - क्यों क्या, तुम्हें तैरना नही आता?लकड़हारा - नही, भाई यदि जानता होता तो.
ग्रामीण - ठीक है.
तुम दुखी मत होवो, मुझे तैरना आता है। मैं कोशिश करता हूं,. आगे तुम्हारा भाग्य। (यह कह कर ग्रामीण पानी में कूदकर एक चांदी की कुल्हाडीं निकाल कर देता है।) अरे भाई, तुम कितने भाग्यवान हो, लो तुम्हारी चांदी की कुल्हाड़ी, लेकिन.

लक़ड़हारा - लेकिन क्या.
ग्रामीण - तुम झूठ भी बोलते हो? इतनी कीमती कुल्हाड़ी। और तुम कह रहे थे मैं गरीब हूं।लकड़हारा - नहीं भाई, मैंने जीवन मे कभी झूठ नही बोला। ये कुल्हाड़ी मेरी नहीं है।ग्रामीण - ठीक है। अबके तुम्हारी रोजी रोटी के लिये
एक बार फिर कोशिश करता हूं। (पानी में फिर कूदता है, और रत्न जड़ित कुल्हाड़ी निकालकर देता है।लकड़हारा - (आश्चर्य से) क्या मिल गई भाई।ग्रामीण - हां मिल गई, लो भाई-बड़े भाग्यवान हो जो इतनी कीमती कुल्हाड़ी तुम्हें मिल गई, वर्ना सारी जिंदगी की कमाई से हाथ धो बैठते।लकड़हारा - नही भाई, मैं तो बहुत गरीब हूं। ये तो मेरी है ही नही। (दुःखी होकर) ये मेरा दुर्भाग्य है, खैर जाने दो भाई आपने मेरे लिए बहुत कष्ट उठाया। मै ही भाग्यहीन हूं, इसमें आप का क्या दोष, है आपका बहुत आभारी हूं जो आपने मेरे लिए.
ग्रामीण - (बीच में ही) नहीं, भाई नहीं। इसमें उपकार का क्या बात है। मुसीबत के समय एक दूसरे के काम आना तो हमारा धर्म है। तुम निराश मत होवो, मैं एक बार फिर प्रयास करता हूं।लकड़हारा - नहीं, भाई नहीं, तुम अब मेरे लिए अपने को बारबार खतरे में मत डालो। शायद वह मेरे भाग्य में नहीं।ग्रामीण - नहीं भाई, दुखी मत होवो। (ग्रामीण पानी में कूदकर असली लोहे की कुल्हाड़ी निकाल कर देता है।) (लकड़हारे से-लो भाई अब के तो ये लोहा लंगर हाथ लगा है।)लकड़हारा - (अपनी लोहे की कुल्हाड़ी देखकर खुशी से उछल जाता है) वाह! भाई, वाह! मैं कितना भाग्यवान हूं जो मुझे मेरी रोजी रोटी वापिस मिल गई। तुम्हारा ये एहसान मैं जीवन भर नहीं भूलूंगा। भगवान तुम्हें सुखी रखें।ग्रामीण - नहीं भाई, इसमें एहसान की कोई बात नहीं। पर.
(कुछ देर रूक कर) एक बात मेरी समझ में नही आई।लकड़हारा - (हाथ जोड़कर) वह क्या भाई.
ग्रामीण - मैने तुम्हें पहले चांदी की कुल्हाड़ी दी, तुमने नहीं

लियाशायद.
यह भी तुम्हारा दुर्भाग्य है।लकड़हारा - जो दूसरे की वस्तु को अपनी कहता है, ठीक नहीं। मेहनत और ईमानदारी से मुझे जो भी मिलता है वही मेरा धन है, धर्म है। किसी महात्मा ने ठीक ही कहा है- गो धन गज धन बाज धन और रतन धन खान। जू पावै संतोष धन, सब धन धूरि समान।।ग्राम◌ीण - (अपने असली, ईश्वर के रूप में मंच पर प्रस्तुत होता है)धन्य हो भाई- मैं तुम्हारी ईमानदारी से बहुत प्रसन्न हूं मांगो क्या मांगते हो।लकड़हारा - भगवन। मैं धन्य हुआ जो आपका दर्शन पा सका। मैं चाहता हूं कि यह वन इसी प्रकार
हरा-भरा रहे तथा मैं और मेरे बच्चे हमेशा इससे लाभ उठा
सके।भगवान - एक शर्त पर कि तुम हरे-भरे पेड़ों को नही काटोगे न ही लालच में पड़ोगे। साथ ही जरूरत से अधिक लकड़ी नही
काटोगे।लकड़हारा - मुझे शर्त मंजूर है। (पटाक्षेप) दृश्य २ रापात्र - रामू के बापू -पेड़ (मंच पर ग्रामीण सो रहा है) पाश्र्व स◌े पत्नी की आवाज आती हैपत्नि - अरे, रामू के बापू, सूरज सर पर चढ़ गया है। क्या आज लकड़ी काटने नहीं जाना है। जो इस तरह घोड़े बेचकर सो रहे हो।लकड़हारा - उठता हूं। भागवान, कोई पहाड़ तो लाना नही है। लकड़ी ही तो लाना है। कहीं से भी काटना है, काट लेगें। सारे सपने का सत्यानाश कर डाला।पत्नि - (मंच पर आती है) कैसा सपना । आजकल सपने ही देखते रहते हो या कुछ काम धाम भी करोगे।लकड़हारा - क्या सपना था ? मालामाल हो जाता।पत्नि - वह कैसे ?लकड़हारा - भगवान निकाल निकाल कर चांदी की
कुल्हाड़ी दे रहे थे पर.
पत्नि - छोड़ो ये सपने-वपने अपनी कुल्हाड़ी उठाओ और जाओ जंगल लकड़हारा - ठीक है जाता हूं, भाग्यवान। (अपनी कुल्हाड़ी उठाकर जंगल की तरफ जाता है। मन ही मन बात करता है) जिधर देखो दूर तक जंगल का पता नहीं जो थे वे कटते जा रहे हैं और उनकी जगह खड़े हो गए ये सीमेंट क◌े जंगल। ना मालूम कहां तक

पांव तोडंने पड़ेंगे। क्या मुसीबत है (अचानक उसे चोट लगती है, वह चीख उठता है, एक पेड़ के पास जाकर उसकी पत्तियों का रस घाव पर लगाता है। (कुछ दूर जाकर एर पेड़ की छांव में बैठ जाता है- आह! कितनी ठण्डी छाया है। सारी थकान दूर हो गई। (हरे-भरे पेड़ के नीचे से उठकर अपनी कुल्हाड़ी सम्हालता है।) चलो यही सही इसे ही साफ करें (कुल्हाड़ी चलाने की मुद्रा में उठता है।)पेड़ - अरे! अरे! अरे! ये क्या कर रहे हो।ग्रामीण - उठकर अपनी कुल्हाड़ी सम्हालता है।) चलो यही सही इसे ही साफ करें (कुल्हाड़ी चलाने की मुद्रा में उठता है।)ग्रामीण - (चौंक कर) कौन ? (आसपास नजर दौड़ता है)पेड - अरे भाई ये तो मैं हूं।ग्रामीण - (डरकर) कौन भूत्त्त् .

पेड़ - डरो नही भाई, ये तो मैं पेड़ हूं- पेड़।ग्रामीण - (आश्चर्य से) पेड़। क्या तुम बोल भी सकते हो?पेड़ - हां, हां क्यों नही। तुम्हारे समान मेरे भी तो जीवन है। जीवन तो हर सजीव वस्तुओं में होता है।ग्रामीण - जीवन और

तुममें? कया चाहते हो तुम ?पेड़ - भाई, तुम मुझ बेकसूर पर क्यों वार कर रहे हो ?ग्रामीण - वार कैसा वार, अरे मुझे तो लकड़ियां काटना है, सो काट रहाहूंपेड़ - भाई, तुम कितने बेरहम कब से हो गये, मैं ते तुम्हारा दोस्त हूं और तुम अपने ही साथी पर वार कर रहे हो। शायद तुम नहीं जानते पौधों से पेड़ बनने में कई वर्ष लगते है और तुम हो जो एक ही वार में मेरा जीवन समाप्त कर रहे हो।ग्रामीण - तो क्या करूं। चार चार बच्चों को पालना पड़ता है। कोई नौकरी तो है नहीं मेरे पास। बस यही एक रास्ता है रोजी रोटी का।पेड़ - पर भाई, जरा तो सोचो हरा भरा हूं मैं, मुझे काटकर तो तुम पाप के भागीदार भी तो बनोगे। तुम तो जानते ही हो प्रत्येक वृक्ष ईश्वर का अवतार है।ग्रामीण - पाप, कैसा पाप ?पेड़ - अरे भाई, तुम कितने बदल गये। तुम्हारे हमारे संबंध तो पुरातन से हैं। तुम यह भी भूल गए कि मैं ही तुम्हे जीने के लिये शुद्व हवा, पानी और भोजन

सभी कुछ मैं ही तो देता हूं।ग्रामीण - तो क्या यह तो तुम्हारा काम है। इसमें एहसान की कया बात है।पेड़ - मैने कब कहा एहसान है भाई, पर यह तो तुम अच्छी तरह जानते हो बिना हवा के मनुष्य जिंदा नही रह सकता। उसे सांस लेने के लिए शुद्व हवा तो चाहिए ही और ये काम भी तो मैं ही करता हूं।ग्रामीण - ठीक है, ठीक है। पर मेरे सामने भी तो समस्या है। ढेर सारे बच्चे, बीबी, मां-बाप, भाई-बहन, सबके सब और कमाने वाला एक बाकी खाने वाले। भाई है सो बेकार-बेरोजगार।पेड़ - मैं तुम्हारी मजबूरी समझता हूं। इसमें कुछ तुम्हारा अपना भी दोष है जो इतना बड़ा परिवार.

। खैर, पर इसका मतलब ये तो नहीं कि तुम अपने स्वार्थ के लिये मुझे ही बलि का बकरा बनाओ।ग्रामीण - स्वार्थ-वार्थ में क्या जानूं।पेड़ - तुम भी कैसी बात करते हो भाई, यदि हम कटते रहे तो ये बेचारे वन्य वशु कहां जायेंगे। क्या तुम अपने स्वार्थ के लिए उनका घर उजाड़ोगे ? ग्रामीण - तो फिर क्या, मैं अपना घर उजाडूं।पेड़ - नहीं भाई, कैसी बात करते हो। मेरा मतलब ये नही है, परंतु तुम हमें काटकर क्या प्रकृति का संतुलन नहीं बिगाड़ रहे हो। यदि तुम इसी तरह हमें काटते रहे तो वर्षा असंतुलित हो जावेगी, जमीन कटती चली जावेगी और एक दिन.

ग्रामीण - तुम्हारी बात तो ठीक है। पर अब तुम ही बताओ मैं क्या करूं ?पेड़

- उपनिषद में हमें और तुम्हें एक जैसा कहा गया है। जैसे शक्ति शाली तुम हो, वैसे हम भी हैं। हमारे पत्ते हैं और छाल हमारी चमड़ी हैं। तुम्हारी त्वचा में रक्त बहता है जबक हमारी छाल में रस बहता है। हमसे जल है, जल से अन्न और अन्न से जीवन है। क्या तुम अपने ही हाथों अपना जीवन नष्ट नहीं कर रहे हो?लकड़हारा - तब मैं क्या करूं।पेड़ - कम से कम अपने हाथों अपने पैर पर कुल्हाड़ी तो मत मारो। कभी हरा भरा पेड़ मत काटो। जब भी कभी कोई पेड़ काटो उसके बदले में ४ पेड़ और लगावो। उन्हें अपने बच्चों के

समान पालो तकि प्रकृति का संतुलन बना रहे और तुम्हारी आने वाली पीढ़ी प्रकृति के शुद्व वातावरण में सांस ले सके।+><LITERATURE><BIOGRAPHY><GUNDOJ, VIKRAM SINGH><SIR PRATAP AUR UNKI DEN><1983><RAJASTHANI SHODH GRANTH><JODHPUR><18-23><2090><GUNDOJ, VIKRAM SINGH-SIR PRATAP-BIO-O><ABHA SOOD>
<+
अपने पिता के व्यवहार के प्रभाव के कारण एवं इन दो घटनाओ के व्रतांतको देख सुनकर सरप्रताप की अंग्रेजो के प्रति मित्रता की धारणा औरदृढ़ हुई तथा अपने बाल्यकाल मे अपनायी इस धारणा को आजीवन उन्होनेनिभाने का प्रयास किया । तीसरी घटना थी किले के बारुदखाने पर बिजली गिरने से उनमें आग लगनेकी ।इस घटनाक्रम के बारे में सरप्रताप ने अपने जीवन चरित्र में लिखाहैं कि-"मुझे भली प्रकार याद है कि दिल्ली के गदर का समाचार आने केठीक १५ दिन बाद किले के बारुद खाने पर बिजली गिरी । यह बारुदखाना पहाड़ीमें चट्टान को काटकर बनाया गया था ।उसमें चार कमरे थे । तीन में बारुदथा और चौथे में सन । ऊपर पत्थर की छत थी , जो बहुत मजबूत थी । बारुद के जलनेसे इतने जोर का धमाका हूआ कि एक पत्थर, जो चार मन का था, वह्रां से उठकरछः मील की दूरी पर चौपासनी नदी में जा पड़ा । फतहपोल के निकट बहुत से घरगिर गये । चामुण्डाजी का मदिंर भी पूर्णतया नष्ट हो गया । शहर के मकानोंके लगभग सभी किंवाड़ चौखटो से निकल गये और सब बन्द ताले खुल गये । इसकेअतिरिक्त ५०० आदमी मारे गये ।
जिस समय वह बिजली गिरी तो उसमें थोड़ी ही देर बाद दो घमाके इतने जोर के हुए कि जो न कभी सुने थे और न देखे थे । आवाजें सुनते ही पिताजी को यह सन्देहहुआ कि शायद बागी फौज सूरसागर आकर रेजीडेन्सी पर हमला करने लगी हैऔर यह आवाजें उनकी

तोपों की हैं । दूसरी आवाज से महल का किवाड़ टूट गयाऔर शीशे का एक टुकड़ा महाराजा तखतसिंह की नाक के पास गाल पर लगा, जिससेतीन इंच लम्बा और एक इंच गहरा घाव हो गया । उन्होंने सबको आज्ञा दी किघोड़ो पर सवार हो और बन्दूकें तथा तलवारें लेकर सूरसागर की ओर बढ़ो। फलतः वे स्वयं और हम सब वहां पर उपिस्थत लोगो के साथ कमर कस कर तैयारहो गये और सूरसागर की राह ली । जब आधे रास्ते तक गये, तो रेजीडेन्ट साहबका पत्रवाहक मिला । उसने बताया कि वहां तो कोई हमला नहीं हुआ लेकिनरेजीडेन्ट को संदेह हुआ कि कहीं कायलाना पर धावा न बोला गया हो । इतनेमें जोघपुर से एक सवार ने आकर सूचना दी कि वास्तव में बारुदखाने परबिजली गिरी है और उसके उड़ने से ये धमाके हुए हैं । जब जोधपुर पहुंचे तो अभी सन की कोठड़ी जल रही थी । महाराजा साहब ने इस भयसे कि कहीं फिर घमाका न हो और किले में रखे हुए बारुद को हानि नहीं पहुंचेबारुद के तीसरे कोठे को बचाने की उन्होंने कोशिश की । फलतः कई स्थानोंपर छेद करके और पास ही के तालाबों से पानी को घड़े औऱ कलश मगा-मंगा करउनसे आग बुझवा दी । इस प्रकार तीसरा कोठा बचा लिया । उनकी जान खतरे मेंथी और उस समह कई सर-दारों और अहलकारों ने प्रार्थना की कि आप किसीसुरक्षित स्थान पर पघार जायं, लेकिन उन्होंने अपना कर्तव्य समझकर वहीं डटे रहना उचित समझा । नगर में इतनीअधिक सख्यां मे मकान गिरे कि उन्हें खोदने में आठ दिन लगे । दरबारने यह कोशिश की थी कि कोई आदमी कहीं दबा हुआ हो तो उसे बचाया जाय किन्तुकोई भी दबा हुआ आदमी जीवित न मिला । कारण यह था कि सब इमारतें पत्थर कीथी और उनके गिर पड़ने से किसी के बचे रहने की आशा नहीं हो सकती थी । जिसपर उन्होंने अपनी ओऱ से पूरा प्रयत्न किया । "
इसी क्रम में चौथी घटना का उल्लेख करते हुए वे आगे लिखते हैं कि-"इसघटना के ठीक १५ दिन बाद एक ऐसा भयानक भूचाल आया

जो कई मिनट तक रहा । यदि१५ दिन पहले बारुदखाना के उड़ जाने
से मकान न गिरते तो वह जरुर इस भूचालमें गिर जाते । जो उस आधात से बच गये थे, उन पर इस भूचाल का कोई असर न हुआ। ये तीनो घटनाएं पंचमियों पर हुई जो निरन्तर एक के बाद दूसरी बारी-बारीसे पड़ी । " प्राकृतिक प्रकोप की ये दो हृदय विदारक घटनाएं प्रतापसिंह की बालवस्थामें घटित हुई तथा इस अवसर पर किये गये बचाव कार्य आदि का उनके ऊपर गहराअसर पड़ा । प्रजा के सुख-दुःख का एक शासक को कितना घ्यान रखना होता हैतथा प्राकृतिक समस्या और जनसमस्या के निवारण का शासक पर कितना गुरुतरभार होता हैं, उसके इस नैतिक कर्तव्य को समझने का प्रतापसिंह कोअपनी बाल्यावस्था में ही अच्छा अवसर प्राप्त हुआ तथा उपर्युक्तचार घटनाएं भी इसी प्रसंग पर फ्रकाश डालती हैं । १२ वर्ष की अवस्था में प्रतापसिंह की अपने दोनों भाइयों के साथ रहनेकी व्यवस्था फतहमहल में की गयी । इस काल में शिकार का क्रम तो जारी रहाही परन्तु साथ ही इस अवस्था में राज्य का कामकाज देखने और सीखने काप्रतापसिंह को अत्यीधक चाव था । फलस्वरुप अधिकांश समय दफ्तरी औरअहलकारों से सम्बन्धित कागजात, नई राजाज्ञाएं आदि पढ़ने व समझनेमें व्यतीत होने लगा । इस कारण धीरे-धीरे वे राज्यकार्य से परिचितहो गये । इस बीच महाराजकुमार जसवन्तसिंह का पहला विवाह जामनगर कीराजकुमारी जाड़ेची से तथा दूसरा विवाह ईडर रिसायत के मुडेटी ठिकानेके सरदार चौहान सूर्यमल की बेटी से सम्पञ हुआ । दूसरी शादी का कारणयह था कि उस समय महाराजकुमार जसंवतसिंह की आयु २० वर्ष की थी । तथा उनकीपहली पत्नी की अवस्था केवल ८-९ वर्ष की ही थी । वैसे राजपरिवार मे बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित थी और यह उनका एक रिवाज सा बन गया था । महाराजकुमारजसवंतसिंह के पश्चात जोरावरसिंह का विवाह झालामन्ड के ठाकुर गंभीरसिंहकी लड़की के

साथ हुआ । उन्हीं दिनों की एक घटना है जो प्रतापसिंह के जीवनमें घटित स्मरणीय य घटनायों मे ं से एक है । उसका वर्णन उन्हीं केशब्दों में-"उन्हीं दिनों की मुझे एक और बात याद है और वह यह है कि महाराजसाहब एक बार गौडवाड के इलाके में शेर की शिकार के लिए गये । लौटते समयबाली में ठहरे यहां सूअर बहुत होते हैं । मैंने वल्लम से सूअर मारनेकी आज्ञा चाही लेकिन उन्होंने इन्कार कर दिया और कहा कि
तू अभी बहुतछोटा हैं, जगंल और भूमि भी खराब हैं । फिर महाराजकुमार जसंवतसिंहने आज्ञा मांगी लेकिन नेजे से सूअर मारने की आज्ञा नहीं मिली । हांहाथी पर से गोली चलाकर सूअर के शिकार की स्वीकृति मिल गई । मेरे लिएआज्ञा थी कि मै तम ाशा देखने के सिवा और कुछ न करुं और हाथी पर बैठा रहूं। जब हमारा दल रवाना हुआ, तो भाईसाहब और उनके साथ कुछेक आदमी बन्दूकेंलेकर रवाना हुए । वह स्वयं तो हाथी पर बैठे और मैं घोड़े पर सवार हुआ । रास्तेमें उन्होंने कई बार हाथी पर आ जाने के लिए कहा, लेकिन मुझे हाथ ी कीसवारी बिल्कुल नापसंद थी, घोड़े को अधिक पसन्द करता था, मैं घोड़ेसे न उतरा । जब जगंल में पहुंचे तो अचानक एक सूअर मेरे पास से निकल गया। ऐसा मौका देखकर मुझसे रहा न गया और मैंने अपना घोड़ा उसके पीछे छोड़दिया । मेरे दाहिने हाथ में चारनाली बन्दकू थी । मैंने बायें हाथ परबन्दूक को सहारा देकर एक फायर किया जो उसके पेट में लगा । दूसरा फायरकरने के लिए हाथ लवलवी पर रखा हुआ था और ख्याल सूअर की ओर था । इतनें मेंसामने एक खाई आ गई , जिसमे ठोकर खा कर घोड़ा नीचे जा गिरा और मैं भी बायेंहाथ गिर गया । दाहिने हाथ में जो बन्द ूक थी, उसका मुहं जमीन में घंसगया और उघर आप से आप लवलवी पर जोर पड़ा, जिससे बन्दूक चल गई । ऐसी दशा मेंगोली को बाहर निकालने के लिए रास्ता न था, इसलिए मुंह के पास नालीको तोड़कर मेरे बायें बाजू में जाकर लगी और चू कि

नाली तोड़ने में उसकाजोर खत्म हो चुका था, इसलिए बाहर न निकल सकी और बाहं में ही रह गई । घोड़ाउठकर भाग गया । मैंने बन्दूक और पगड़ी वहीं छोड़ दी और घोड़े के पीछे भागा। मैं उस समय गरम था । गोली लगने का मुझे पता न था । घोड़ा तो न पकड़ा जा सका,लेकिन लौटकर मैंने पगड़ी जो उठाई और सिर पर बांघने लगा, तो देखा किबाहं से खून बह रहा हैं और छाती लहू से तर है । जब आस्तीन ऊपर चढ़ाई तो देखाकि गोली अटकी हुई है । पहले तो मैनें स्वयं ही दांतों और हाथ से गोलीनिकालनी चाही, इतने में कुछेक आदमी भी आ गये, लेकिन उनसे भी न निकली। अन्त में नूर मुहम्मद मकरानी ने दातं से पकड़कर एक ओर झटका दिया, जिससेबेचारे का दांत ही टूट गया । फिर उसने दूसरी तरफ के दांतो से पकड़कर इसतरीके से जोर लगाया कि गोली
निकल गई । मेरे भाई साहब डर के मारे उदासीनहो गये कि दरबार साहब उन पर बहुत नाराज होंगे । लेकिन मैंने उन्हेंतसल्ली दी कि वह चिंता न करें । मैंने पगड़ी बाध ली और साहस करके दूसरेघोड़े पर सवार हो गया । लेकिन प्यास के मारे मेरा दम निकला जाता था । आस-पासकहीं पानी न था । भाई साहब ने चोब चीनी को दाने मुहं में रखने को दिए,लेकिन उनसे मुहं और भी सूख गया । बहुत प्रयत्न के बाद थोड़ा सा पानी मिला। आश्चर्य है कि इतनी अधिक प्यास थी, लेकिन एक घूटं पीते ही शांति होगई । जब हम डेरे पहुंचे तो पिताजी सोये हुए थे । सब डरते थे । महाराजकुमार जसवंत-सिंहजीने सारा हाल कह सुनाया । किन्तु इस बात से सभी को आश्चर्य हुआ कि दरबारसाहब ने किसी को कुछ न कहा और मुझे आकर भी यही कहा कि मै बुहत प्रसञ हूंकि तुम घायल हुए हो, क्योंकि राजपूत के लिए घायल होना विवाह से कमनहीं । लेकिन इस बात का दुःख अवश्य है कि अपने हाथ से घायल हुए हो, दुश्मनके हाथों से नहीं । फिर जोधा भैरोसिंहजी को हिदायत दी कि बबूल की दांतुनबनाकर और शराब में भिंगोकर मेरा घाव साफ करें ।

" महाराजकुमार जसवंतसिंह और जोरावरसिंह के विवाह के पश्चात् प्रतापसिंहका प्रथम विवाह सन् १८६० में जाखन के ठाकुर लक्ष्मणसिंह भाटी कीपुत्री के साथ संपन्न हुआ । ठाकुर लक्ष्मणसिंह भाटी की एक बहिन जोमहाराजा मानसिंह की महारानी थी, का इस विवाह में महत्वपूर्ण हाथथा । रिश्ते में वह प्रतापसिंह के दादी लगती थी । उनके कोई संतान तो थीनहीं । प्रतापसिंह पर विशेष प्रेम था और एक तरह से उन्हें गोद ले रखाथा । मांजी भटियानीजी की यह हार्दिक इच्छा थी कि उनके आंखो के सामनेप्रतापसिंह का विवाह हो जाय इसलिए अपनी भतीजी (ठा.
लक्ष्मणसिंहभाटी की पुत्री) से विवाह करा दिया । दुल्हन ८ वर्ष की थी और दूल्हेका आवस्था केवल १५ वर्ष की थी । इस प्रकार छोटी अवस्था में ही यह विवाहसंम्पन्न हुआ । राजकुमार प्रतापसिंह का दूसरा विवाह जैसलमेर हुआ। उनके दूसरे विवाह के कुछ समय पूर्व एक बुहत ही मनोरंजक घटना घटी । घटना सन् १८६३ की है । बरसात के दिन थे । उस दिन बरसात होकतर थम गई थी । ऐसेमौसम में महाराजकुमार जसंवतसिंह और प्रतापसिंह कुछ साथियों केसाथ हरिण की शिकार के लिए झालामण्ड की ओर गये । शिकार में अभी दो-तीनहरिण ही हाथ लगे थे कि एकाएक मूसलाघार वर्षा होने लगी । ऐसी स्थितिमें उन्होंने झालामण्ड जाना उचित समझा । झालामण्ड पहुंचकर भोजनकिया । बारिश इतनी जोर की थी कि झालामण्ड की नदी में पानी का स्तर बढ़नेलगा । गांव के चारो ओर पानी होने से झालामण्ड एक द्वीप सा बन गया । पानीके बढ़ते हुए स्तर को देखकर दोनों भाइयों ने यह विचार किया कि वर्षाके कारण हमें कुछ दिन के लिए झालामण्ड न रुकना पड़ जाय इसलिए शीघ्रही अपने साथियों के साथ जोघपुर के लिए रवाना हो गये । झालामण्ड ठाकुरगंभीरसिंह के रोकने पर भी नहीं रुके । झालामण्ड की नदी से पार होनेलगे तो पानी सिर से ऊपर तक की ऊंचाई से बह रहा था । महाराजकुमार जसंवतसिंहको तैरना नहीं आता था ।

अतः प्रताप सिंह ने अपनी देशी नस्ल की थीड़ी (मारवाड़ीघोड़ी) जो बुहत अच्छी तैरा करती थी, उन्हें दी और स्वयं उसकी लगामपकड़ कर तैरते हुए नदी पार की । नदी से पार तो हो गये लेकिन उसके बाद भीचारॉं ओर पानी ही पानी फैला हुआ नजर आ रहा था । उन्हें ऐसा लगा कि प्रलयहोने वाला है । वर्षा भी निरन्तर हो रही थी । ऐसी दशा में 'गोगथला' नामक एक ऊचे टीले की ओर सब रवाना हुए । उस अवस्था में उन्हें वही एक मात्रसहारा दीख पड़ा । कुछ समय तक उसी टीले पर टिके रहे परन्तु जब देखा कि पानीयहां भी पहुच जायेगा और हम यहां सुरक्षित नहीं रह सकते तब विवश होकरउनको वह टीला छोडना पड़ा तथा एक पहाड़ी की ओर प्रस्थान किया । अर्द्वरात्रिमें वहां सब पहुंचे जैसे-तैसे कर रात बिताई । प्रातः होने पर देखातो पहाड़ी के चारों ओर दूर तक पानी ही पानी दिखलाई पड़ रहा था । यह देखकरसभी निराश हो गये । उनके कपड़े पानी से तर थे, न सिर छुपाकर बैठने की कोईजगह थी न खाने-पीने की पास में कोई सामग्री थी । ऐसी स्थिति में सबकानिराश होना स्वाभाविक ही था । यात्रा की थकान, जाड़े की ठिठुरन और पेटकी जठरागिन के कारण सब के प्राण व्याकुल हो रहे थे । ऐसी दशा में प्रतापसिंह एक मुसलमान सवार के साथ इधर-उधर घूमने लगेऔर घूमने के दौरान दो हिरणों का शिकार किया । बन्दूक के तोड़ों से आगजलाई और पत्थरों तथा चटटानों के नीचे से प्राप्त घास-फूस औऱ लकड़ीके टुकड़ो पर उनको अधपका करके पेट की भूख को शांत करने का प्रयास किया। जिस पहाड़ी पर उन्होंने रात बिताई उससे माइल भर की दूरी पर 'फिटकांसणी'नाम का एक छोटा सा गांव था । वहां जाकर कुछ खाने पीने का सामान लाने कीतजवीज की । बहुत मुशकिल से वहां पहुचां गया और वहां से कुछ नमक मिर्चतथा बाजरे का आटा प्राप्त हुआ । गांव के निवासी स्वयं अतिवृषटि सेसंकट की स्थिति में थे । उनके मकान ही नही सारा माल असबाब और पशु आदिभी नष्ट हो रहे थे । कुछ बोरियां

व चारपाइयां लेकर पहाड़ी पर गये और छकड़ोकी छत के रुप में काम ली जाने वाली बोरियों का एक तम्बू बनाया । तम्बूमें चारपाइयां डाल उनके नीचे घोड़ो का सामान रख कर ऊपर लेट जाते । उनकेपास न तो पैसे थे न उस गावं में सामान मिल सकता था । एक सप्ताह तक बरसातकी झड़ लगी रही और विवश होकर उन्हें वहीं एक सप्ताह बिताना पड़ा । गांवसे जो कुछ भोजन प्राप्त होता उसी पर निर्भर रहना पड़ता । संकट की घड़ीमें ही व्यक्ति के धैर्य की परीक्षा हुआ करती हैं । ऐसी परिस्थितिमें भी प्रतापसिंह हर संकट को धैर्य से झेलते रहे तथा अपने प्रयाससे सथिति को अनुकूल बनाने का श्रम करते रहे । वयक्ति में सबसें बड़ीआवश्यकता होती है हर स्थिति में अपने आप को आनिन्दत अनुभव करने कीउस व्यक्ति में कमी नहीं थी । सप्ताह भर की उस विकट प्राकृतिक आपदा में फंसे रहने पर भी उस तरुण की तरुणाई से सब लोग खुशगावर होकर वक्तगुजारते आनन्द की अनुभूति तो व्यकित के विचार पर निर्भर करती हैंसाधन पर नहीं । और फिर जब तक कोई व्यकित आपदाओं से परिचित नहीं होतातब तक उसे सुख और आनन्द की महता कैसे ज्ञात होगी । स्वयं प्रतापसिंहके शब्दों में-"प्रत्येक घर से बाजरे की एक-एक रोटी आया करती औरउन्हीं पर हमारा निर्वाह होता । उन दिनों जो आनन्द रुखी सुखी रोटियोंमें था वह लाख बढ़िया भोजन होने पर भी कभी नहीं मिला । हम उन गरीब भाइयोंके कृतज्ञ थे कि वे मुसीबत में होते हुए भी हमें रोटी भेजते थे । सच तोहैं-जब तक मनुष्य आप्ति को नहीं देखता तब तक उसे सुख और आनन्द की कद्रनहीं होतीं । " इधर तो वे इस आपति में भी ग्रामवासियों के सहयोग से आन्नद की अनुभूतिकर रहे थे । किन्तु जोधपुर के राजमहल में हालात कुछ और ही थे । वहां यहबात घर कर गई कि वे सब मर गये हैं या पानी में बह गये हैं क्योंकि सातदिन तक कोई सूचना या समा-चार भी प्राप्त नहीं हुआ और रोना धोना तथाशोक भी शुरु कर दिया ।

सातवें दिन महाराजकुमार जसवंतसिंह का धनियानामक सईस खोज में निकला तथा एक टीबे पर खड़ा होकर इधर-उधर नजर दौड़ानेलगा । गुड़ा के बनजी खीची तैरकर उसके पास गये और समाचार दिया कि सभी सकुशलहैं । धनिया सईस ने जब यह खबर महाराजा साहब को दी तो राजमहल में खुशीकी लहर छा गई । धनिया को इनाम के रुप में ५०० रु.
तथा एक जोड़ी सोने के कड़ेमिले । पांच हाथी भेजकर बाढ़ में फंसे उन सब लोगों को जोघपुर लाया गया। इस सात दिवसीय गुमशुदा शिकारी दल के जोधपुर पहुचने पर खुशियां मनाई गयी । शहर के लोग भी उनको देखने के लिए उमड़ पड़े । राजमहल में सभी प्रकारकी सुख-सुविधायों में पले राजकुमारों को इस घटना से अवश्य ही कुछनवीन अनुभूतियों हुई होगी । हरिण की शिकार की बदौलत उस सात दिवसीययातना शिविर का अनुभव प्रत्येक शिविरार्थी को जीवन भर याद रहनास्वाभाविक हैं । इस प्रसिद्व यादगार घटना के पश्चात् सम्बत् १९१९ को भादौ के महीनेमें राजकुमार प्रतापसिंह का दूसरा विवाह जैसलमेर के छत्रसिंहकी पुत्री से हुआ । ठाकुर छत्रसिह जैसलमेर रावलजी के चाचा थे । इसी अवसरपर महाराजा तखतसिंह का विवाह भी जैसलमेर के रावलजी की बहन के साथसम्पन्न हुआ । महाराजा तखतसिंह और महाराजकुमार जसंवतसिंह के मध्य मनमुटाव पैदाहो गया । महाराजकुमार जसंवतसिंह का ऐसा सोचना था कि उनको आवश्यकताओंऔर अपे-क्षाओं की पूर्ति के लिए महाराजा तखतसिह विशेष घ्यान नदेकर उपेक्षापूर्ण व्यवहार कर रहें है । रींवा से आये शगुन (सम्बन्ध)को महाराजा ने तो स्वीकार कर लिया किन्तु महाराजकुमार ने वहां विवाहकरने से साफ इन्कार कर दिया इससे स्थिति और तनावपूर्ण बन गई अतः महाराजकुमारकिशोरसिह का विवाह रींवा किया गया परंतु इसके पश्चात् भी पिता-पुत्र(महाराज तखतसिह और महाराजकुमार जंसवतसिंह) के मध्य स्थिति मेंसुधार होने की बजाय

आपसी मतभेद और अधिक ऊभर कर सामने आये । वस्ततुःइसका कारण यह था कि दोनों के सलाहकार और सरदार उस मनमुटाव को कम करनेकी बजाय बढ़ाने का प्रयास करने लगे । प्रतापसिंह ने इस आपसी मतभेद कोदूर करने की कोशिश की और कुछ हद तक अपने प्रयास में सफल भी हुए किन्त्पुनः वही स्थिति पैदा हो गयी इस अवसर पर तत्कालीन एजेन्ट टु दी गवर्नरजनरल
कीटिग ने रियासत में उत्पन्न इस स्थिति को समाप्त करने का निश्चयकिया तथा यह उपाय ढूंढा कि बाप और बेटे दोनो को एक स्थान पर न रखा जायजिससे कुछ वैमनस्य कम हो सकता हैं इसलिए महाराज कुमार जसवन्तसिंहको बुलाकर यह समझाया कि तुम युवराज हो और इस समय राज्य का कार्य सीखनेऔर समझने का प्रयास कीजिए तथा एक परगने का प्रबन्ध करने में अपनीकुशलता और योग्यता प्रमाणित कीजिए ।